International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 05, No. 02(III), April - June, 2023, pp. 146-150

आधुनिक परिवेश में श्रीमद्भगवद्गीता के कर्मयोग की प्रासंगिकता

सीमा देवी*
डॉ. हरिश्चन्द्र सिंह**

सार

मनुष्य के लिए आज का वर्तमान जीवन जितना सुविधाओं से परिपूर्ण है, उतना ही तनावपूर्ण दुःख और संताप से भरा हुआ है। पश्चिमी देशों ने मानव विकास का जो वातावरण खड़ा किया है, उसने मनुष्य के मन को न समझकर सिर्फ बाहरी पहलू को ही देखा है और जिससे मनुष्य कहीं न कहीं संतुलन खोया और अधूरा–2 सा हो गया है। आज का मनुष्य जो सुखी जीवन की बढ़ी चाहत के लिए खड़ा है, उसका मार्ग उसके कर्म में ही निहित है और उसे अपने कर्म के रहस्य को समझना होगा जो कि गीता के कर्मयोग के माध्यम से ही सम्भव है। जीवन के वास्तविक अनुभवों एवं व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान के लिए श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित ''श्री हरि कृष्ण'' के दिये गये उपदेशों को समाहित किया गया है। विगत वर्षों में सभी ने कोरोना जैसी महामारी क्षेत्र में अनेक समस्यायें जैसे लक्ष्य का निर्धारण नहीं हो पाना, पढ़ाई में मन न लगना व शिक्षा से जुड़ अनेक प्रश्नों के समाधान हेतु शोधार्थी ने वर्तमान परिदृश्य में श्रीमद्भगवद्गीता में कर्मयोग की प्रासंगिकता का चुनाव किया है, जिसमें प्रत्येक अध्याय से शैक्षिक मूल्यों का चुनाव किया गया है व उन्हें वर्तमान परिस्थितियों व परिदृश्यों से जोड़ने का प्रयास भी किया गया है, जिसे पढ़कर छात्र व छात्राएं एवं विद्यार्थी शैक्षिक समस्याओं का समाधान ढूंढ़ सकेंगे। जैसे–एकाग्रता, लक्ष्य के निर्धारण की आवश्यकता एवं भविष्य संचेता आदि। शोध उपरान्त यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि वर्तमान परिदृश्य में श्रीमद्भगवद्गीता में अन्तर्निहित कर्मयोग की प्रासंगिकता सार्थक सिद्ध हुई है। कर्म भीरू आधुनिक मनुष्य जाति के लिए अपरिहार्य हो जाता है कि कर्मयोग का अवलम्बन बन कर घोर आधुनिकीकरण से स्वयं और समस्त विश्व का रक्षण कर सके। शास्त्र सम्मतकर्म ही मनुष्य मात्र व आधुनिक समय के लिए सर्वथा उपयुक्त है। शास्त्रोक्त कर्मों का सम्पादन ही कर्मयोग है।

शब्दकोषः *आधुनिक परिवेश, कर्मयोग, शिक्षा, मानव जीवन।*

प्रस्तावना

भारतीय धर्मग्रन्थों में मनुष्य योनि की प्राप्ति को भाग्य का विषय माना है तथा इसे ईश्वर की सर्वोत्कृष्ट कृति की संज्ञा दी गयी है। तुलसीदास कृत रामचरितमानस में इस योनि की प्रशंसा करते हुए कहा गया है कि–

बड़े भाग मानुष तन पावा,
सुर दुर्लभ सद्ग्रंथन गावा।
साधना धाम मोक्ष करि द्वारा
पारोना जेहि परलोक संवारा।।[1]

* शोध छात्रा, श्री जे.जे.टी. विश्वविद्यालय, विद्यानगरी, चुड़ेला, झुनझुनू राजस्थान।
** शोध निर्देशक श्री जे.जे.टी. विश्वविद्यालय विद्यानगरी, चुड़ेला, झुनझुनू राजस्थान।

उपर्युक्त चौपाईयों में मानव देह का महिमा मण्डन करते हुए इसे मोक्ष का साधन बताया गया है।

जिस मानव देह की प्राप्ति हेतु देवगण भी सदैव लालायित ररहते हैं, उस देह को प्राप्त करने वाला मानव, उस देह एवं जीवन को नष्ट–भ्रष्ट कर रहा है। तथापि कर्मयोग ने आशा की किरण के रूप में मानव जीवन को स्पर्श किया है। ऐसी स्थिति में मनुष्य के लिए अत्यन्त अनिवार्य हो गया है कि वह सद्ग्रन्थों एवं सद्गुरूओं का आश्रय ग्रहण कर जन्म–मरण के इस बन्धन से मुक्ति प्राप्ति हेतु कर्म के चक्र को समझे कि कर्म क्या है? उसकी अवधारणा, फल, एवं भेद इत्यादि क्या हैं?

इन प्रश्नों के उत्तर हमें प्राचीन ऋषि प्रणीत साहित्य में प्राप्त होते हैं। इन सद्ग्रन्थों द्वारा मनुष्य जीवन के परम् लक्ष्य को प्राप्त करना सहज हो जाता है। श्रीमद्भगवद्गीता के कर्म के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि –

कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफल हेतु भूर्मा ते संगोस्त्वकर्माणि।।[2]

अर्थात् तुझे केवल कर्म करने का अधिकार है, केवल कर्म करना तेरे हाथ में है, कर्मों के फल पर तेरा अधिकार नहीं है। अतः तू कर्म फल की इच्छा न रखकर कर्म कर।

इन वाक्यों को पढ़कर तथा श्रवण कर अनेकों महापुरूषों ने कर्मयोग को अपनी साधना मार्ग के रूप में चुना है। गाँधी, तिलक एवं विवेकानन्द इत्यादि महापुरूषों ने इस वाक्य को जीवन में धारण कर श्रेष्ठ मानव जीवन को चरितार्थ किया है। योग की विभिन्न साधनाओं ज्ञान, भक्ति, ध्यान इत्यादि में भी कर्म के महत्व को सहज ही स्वीकार किया गया है। मनुष्य की वर्तमान स्थिति में कर्मयोग सर्वथा उपयोगी एवं श्रेष्ठ है। श्रीमद्भगवद्गीता एवं अथर्ववेद में जिस धर्म का वर्णन है वह कर्म ही है। मानव जाति का कल्याण एवं सद्गति उसके कर्मों में निहित है, उसकी निष्काम भावना से किये गये कर्म ही उसकी विजय का पथ प्रशस्त करेगी।

इस सन्दर्भ में यजुर्वेद में कहा गया है कि –

ईशावास्यमिदं सर्वं यक्तिंञच जगत्यां जगत।
तेन त्यक्तेन भुञजीथातेन मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।।[3]

अर्थात संसार की समस्त स्थावज्ञ व जंगम वस्तुए ईश्वर से परिपूर्ण है, इन वस्तुओं में त्यागपूर्ण भाव (वैराग्य भाव) रखते हुए मनुष्य को अपना पोषण करना चाहिए तथा किसी अन्य व्यक्ति के धन की कामना नहीं करनी चाहिए। इस प्रकार कर्म करते हुए जीवन जीने की कला ही कर्मयोग है। कर्म संस्कारों को समाप्त कर मुक्ति प्राप्ति हेतु मनुष्य को कर्म योग का अवलम्बन कर जीवन व्यतीत करना चाहिए। यह साधना मार्ग मनुष्य हेतु सर्वथा उपयुक्त है, इसके माध्यम से वह साधना पथ पर अग्रसर होता हुआ मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है।

आज अमेरिका सबसे विकसित देश है, जो कि विज्ञान की प्राप्ति करने में विश्व में उच्च स्थान बनाए हुए है लेकिन इस देश के नागरिक सबसे ज्यादा विक्षिप्त हैं, जिन्हें सोने के लिए नींद की गोलियां लेनी पड़ती हैं। इतनी सुविधाओं से युक्त जीवन होने पर भी आज मनुष्य बेचैनी, दुःख और संताप को झेल रहा है और एक गलत जगह पर खड़ा हो गया है। क्या मनुष्य से कहीं चूक हो रही है? ऐसे कुछ सवाल हैं जो हमें सोचने पर मजबूर कर रहे हैं। वर्तमान जीवन में दुःख, बेचैनी एवं अवसाद के मूल कारण कर्मयोग के रहस्य को समझने से पहले हमें मनुष्य के मन के रहस्य को समझना होगा। यदि हम पूर्व के मानव विकास को देखें तो इन देशों में भौतिकवादी विकास की बजाय, जो कि पश्चिम में आधार बना हुआ था इस प्रतिस्पर्द्धा के माहौल में उसे कुछ मिलता तो है लेकिन मानसिक संतोष नहीं मिल पाता और मनुष्य मानसिक रोगी होता चला जाता हे। इसी बेचैनी के कारण घर के झगड़े, समुदाय के झगड़े ओर देश की सीमाओं के झगड़े हैं, जिनमें मनुष्य अपनी गुणवत्ता खोकर सम्पन्न होने की बजाय अधिक आशंकित और भयभीत नजर आता है और जिससे मनुष्य का कहीं सन्तुलन खो गया और वो अधूरा सा हो गया। पश्चिमी देशों ने मनुष्य के मन को न समझकर सिर्फ बाहर के एक पहलू को ही देखा। आज जरूरत है मनुष्य के मन को समझने की।

यदि हम श्रीमद्भगद्गीता में अध्यात्म को देखें तो इसमें बहुत से मार्ग हैं जो मानवता को प्रगति की तरफ ले जाता है जैसे–ज्ञान योग, भक्ति योग और कर्मयोग। गीता में जो कर्मयोग है। ये मार्ग एक ऐसा मार्ग है, जो बिना कुछ किये हुए अनायास ही मनुष्य से जुड़े हुए हैं। जरूरत है तो बस इसके रहस्य को नजदीक से समझने की और इसको समझकर अपने हर कार्य में अमल करने की, जिसकी सहायता से मनुष्य आध्यात्मिकता को प्राप्त करे और अपने कार्य को सम्पूर्णता देते हुए जब मनुष्य अपने मन को अध्यात्मिक बनाएगा तभी वह श्रेष्ठ कार्य कर सकेगा।

कर्मयोग की प्रासंगिकता

आधुनिक जीवन में कर्मयोग की प्रासंगिकता को समझने हेतु हमें सर्वप्रथम कर्म एवं उसके पश्चात् कर्मयोग की अवधारणा को समझना होगा। व्याकरण में क्रिया से निष्पाद्यमान फल के आश्रय को कर्म कहते हैं।

कर्म शब्द संस्कृत भाषा की 'कृष' धातु में अन् प्रत्यय जोड़ने पर निष्पन्न होता है, जिसका सामान्य अर्थ कार्य अथवा क्रिया है।

कर्म को योग शब्द के साथ जोड़ने पर कर्मयोग साधना मार्ग का निर्माण होता है। कर्मयोग की परिभाषायें एवं कर्म के विविध स्वरूपों की चर्चा श्रीमद्भगवद्गीता, श्रुतियों के अतिरिक्त उपनिषदों, ब्राम्हण ग्रन्थों में विषद रूप से की गई है।

यजुर्वेद में कर्म की उपादेयता को स्पष्ट करते हुए कहा गया है –

कुर्वन्नेह कर्माणि जिजिविषेच्छतः समा।

एवं त्वपि नान्थ्रथेतोऽस्ति न कर्मलिप्यते नरे।[4]

अर्थात् इस लोक में कर्म करते हुए ही सौ वर्ष जीने की इच्छा करें। इस प्रकार मनुष्य का अभिमान रखने वाले तेरे लिए इसके सिवा कोई और मूर्ख नहीं है, जिससे तुझे अशुभ कर्म का लेप न हो।

भारतीय संस्कृति के सुप्रसिद्ध गंथ श्रीमद्भगवद्गीता में कर्म योग पर विस्तार से चर्चा की गई है। श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को श्रीमद्भगवद्गीता में इन्द्रियों को वश में रखकर किया जाने वाला कर्म श्रेष्ठ बतलाया गया है।[5]

उपरोक्त कथन से प्राप्त होता है कि कर्म को सुचारू रूप से किस प्रकार किया जाए। परन्तु मन में शंका उत्पन्न होती है कि कर्म फल की इच्छा से रहित होकर मनुष्य कर्म कयों करें? इस प्रश्न का उत्तर भगवद्गीता के दूसरे अध्याय से प्राप्त होता है। श्री कृष्ण कहते हैं कि स्वयं के लिए किये जाने वाले कर्मों को कृपणता की संज्ञा देते हुए इन्हें गर्हित श्रेणी के अन्तर्गत स्थान दिया है।[6] कर्मयोग की महत्ता बतलाते हुए गीता के तृतीय अध्याय में कहा गया है–

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत।

कार्यते स्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजर्गुणैः[7]

अर्थात् कोई भी मनुष्य क्षणमात्र भी कर्म किये बिना नहीं रह सकता। मनुष्य अपनी प्रकृति एवं स्वभाव से पैदा होने वाले गुणों द्वारा विवश हो कर्म में प्रवृत्त होता है। इस उद्धरण से कर्मयोग की महत्ता प्रतिपादित होती है।

श्रीकृष्ण कर्म की महत्ता पर विशेष बल देते हुए कहते हैं कि शरीर निर्वाह के लिए भी कर्म आवश्यक है और अर्जुन को आदेश देते हैं कि शास्त्रोक्त कर्म कर क्योंकि कर्म न करने से भी कर्म करना श्रेष्ठ है।[8]

श्रीमद्भगवद्गीता में ही एक अन्य स्थान पर श्रीकृष्ण कर्म के विषय में कहते हैं कि –

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।

लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्तकर्तुमर्हसि[9]

अर्थात् लोक संग्रह की दृष्टि से भी जनकादि बुद्ध पुरूष कर्म करते हैं, इसलिए पूर्णता की प्राप्ति एवं सामाजिक व्यवस्था को दृष्टि में रखकर कर्म में प्रवृत्त होना चाहिए। शास्त्रों के अनुसार कर्त्तव्य एवं अकर्त्तव्य को जानकर कर्म करते हुए मनुष्य को अपना उत्थान करना चाहिए।[10]

उपर्युक्त हेतु के लिए गीता शास्त्र में श्रीकृष्ण ने तीन प्रकार के कर्मों का उल्लेख किया है–

कर्मणों ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।

अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणों गतिः।[11]

अर्थात् कर्म की गूढ़ता को समझना दुष्कर हे, इसलिए मनुष्य को भली–भांति कर्म–अकर्म–विकर्म को जानना चाहिए तथा तदनुरूप कर्म में प्रवृत्त होना चाहिए।

कर्म– वेद विहित कर्म ही गीता का कर्म है।

अकर्म– अनासक्त कर्म को निष्काम अथवा अकर्म कहा है।

विकर्म– 'विगतः कर्मः यस्य स विकर्मः' अर्थात् जिससे विहित कर्म अलग हो जाये, ऐसा निश्द्ध श्रेणी का कर्म विकर्म है।

श्रीकृष्ण इन सभी प्रकार के कर्मों के त्याग का सुझाव देते हुए, बुद्धियुक्त पुरूष के समान अच्छे–बुरे कर्मों के त्याग की प्रेरणा देते हैं तथा कुशलतापूर्वक कर्मों में प्रवृत्ति की प्रेरणा देते हैं।[12] वे विद्वान जनों के लिए यज्ञ, दान व जप को शुद्धि प्रदान करने वाला कर्म कहते हैं।[13]

श्रीमद्भगवद्गीता के अतिरिक्त महर्षि पतंजलि प्रणीत योगदर्शन योग का महत्वपूर्ण ग्रंथ है। ग्रंथ में कर्म, कर्माशय, कर्म संस्कार एवं क्रिया योग के रूप में कर्म योग के तत्वों का उल्लेख हुआ है पतंजलि योगसूत्र में चौथे पाद में कर्म के भेदों का उल्लेख प्राप्त होता है–

कर्माशुक्लाकृष्णं योगिनस्त्रिविधमितरेषाम्।[14]

अर्थात् योगी का कर्म पाप–पुण्य से रहित होता है तथा अयोगी व्यक्ति पुण्यात्मक, अपुण्यात्मक व पाप–पुण्य मिश्रित कर्म करता है। अयोगी द्वारा किए गए कर्मों का चित्त पर गहन प्रभाव पड़ता है जो उसके भविष्य के जन्मों का कारण बनता है।

उपर्युक्त कथन की पुष्टि हेतु पतंजलि योग सूत्र में आगे कहा गया है–

क्लेशमूलः कर्माशयो दृष्टादृष्ट जन्मवेदनीयः[15]

अर्थात् अविद्यादि क्लेशों का मूल कर्मों के संस्कार हैं, जिसका फल दृश्यमान एवं अदृश्यमान जन्मों में भोगों में जाता है।

अविद्यादि क्लेशों के मूल कारणों के बने रहने पर ही कर्म संस्कारों का विपाक जाति, आयु व भोग्य पदार्थों की प्राप्ति होती है। विपाक रूप में प्राप्त पदार्थ सुख तथा दुःख के रूप में फल देने वाले होते हैं। इसका प्रमुख कारण जीव द्वारा किये गए पुण्य एवं पाप कर्म ही होते हैं।[16] इन कर्मों के बंधन क्षीण करने की कला का नाम ही कर्म योग है।

इन क्लेशों की समाप्ति हेतु महर्षि पतंजलि ने क्रिया योग का मार्ग प्रशस्त किया हे, जिससे कर्मों के आशय (संस्कारों) को कम अथवा समाप्त किया जा सकता है।[17] महर्षि पतंजलि दूसरे सूत्र में क्रिया योग का प्रयोजन बतलाते हैं–

समाधि भावनार्थः क्लेशतनूकरणार्थश्य।[18]

अर्थात् क्रिया–योग का अभ्यास समाधि की अवस्था की प्राप्ति तथा क्लेशों को सूक्ष्म करने हेतु किया जाता है। मनुष्य के क्लेश क्षीण होने से दुःखों की आत्यन्तिक रूप से निवृत्ति हो जाती है।

निष्कर्ष

आज वर्तमान जीवन में मनुष्य को जरूरत है, अपने भीतर और बाहर दोनों का संतुलन बनाने की। मनुष्य अपना ये सन्तुलन रोजमर्रा के काम करते हुए प्राप्त कर सकता है और अपने आप को रूपान्तरित कर सकता है और अहंकार, लोभ, जलन से दूर होकर एक नया मनुष्य बन सकता है। फिर उसका हर कर्म पूरी मानव जाति के लिए समृद्धि लायेगा। उपरोक्त कथनों, सामयिक परिस्थितियों एवं शास्त्रोक्त वचनों से इस बात की पुष्टि होती है कि कर्मयोग के मार्ग का अनुशीलन करना वर्तमान समय की पुकार है। वर्तमान परिवेश की विसंगतियों को अप्राकृतिक व्यवस्थाओं का भंजन कर मनुष्य मात्र के पुर्नस्थापन का मार्ग कर्मयोग साधना द्वारा ही सम्भव है। कर्मयोग की सार्वभौमिकता और प्रासंगिकता निःसन्देह ही मानव जीवन के हर क्षेत्र में विद्यमान है। श्रीमद्भगवद्गीता में विभिन्न साधना मार्गों का प्रतिपादन किया गया है। इनमें से कर्मयोग साधना मार्ग अत्यन्त उपयोगी है। मानव कल्याण एवं मानव द्वारा परम लक्ष्य की प्राप्ति हेतु उपयुक्त है। आज के आधुनिक जीवन में कर्मयोग साधना की उपयोगिता निःसन्देह ही महत्वपूर्ण है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1 रामचरित मानस/उत्तरकाण्ड 3–42
2 श्रीमद्भगवद्गीता–2/47
3 यजुर्वेद– 40/1
4 यजुर्वेद 40/2
5 श्रीमद्भगवद्गीता – 2/7
6 दूरेण ह्यवरं कर्म।। श्रीमद्भगवद्गीता – 2/49
7 श्रीमद्भगवद्गीता – 3/5
8 श्रीमद्भगवद्गीता – 3/8
9 श्रीमद्भगवद्गीता – 3/20
10 तरमाच्छास्त्र प्रमापं ते कार्याकार्यव्यवस्थितो।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि।। गीता 16/24
11 श्रीमद्भगवद्गीता – 4/17
12 बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम।। गीता 2/50
13 यन्जदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत।। गीता 18/5
14 योगसूत्र – 4/7
15 योगसूत्र – 2/12
16 सतिमूले द्वियो जात्यायुर्भोगा। तेत्लासद परिताफलाः पुण्यापुण्य हेतुत्वात्।। योगसूत्र 2/13–14
17 योगसूत्र – 2/1
18 योगसूत्र – 2/2

❖◆❖